अमृत काल
अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ समीक्षित एवं स्वीकृत शोध पत्रिका
ISSN: 3048-5118, खंड3, अंक4, अक्तूबर - दिसंबर 2025

विभूति नारायण राय एवं उनका उपन्यास 'तबादला' एक समीक्षा

अभिजीत कुमार सिंह

शोधार्थी स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, तिलकामाँझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर 812007

लेख इतिहास: प्राप्त: 05 सितम्बर 2025, स्वीकृत: 10 अक्तूबर 2025, ऑनलाइन प्रकाशित: 15 अक्तूबर 2025"

सार

कहना बड़ा मुश्किल है। बिजनेसमैन, पोलिटीशियन, ब्युरोक्रैट सभी हैं, जहां जिसको मौका मिलता है.. .पहले हमारी कुछ पवित्र संस्थाएं थीं, जैसे जुडीशियरी, एजुकेशन और हैल्थ। अब आप डॉक्टरों की इन्कम की तो कल्पना ही नहीं कर सकते। यही हाल न्यायपालिका का है। पत्रकारिता एक जमाने में आदर्श थी। कोई आदमी अखबार की दुनिया में जाता था, तो इसका मतलब होता था कि उसके कुछ आदर्श थे। अब जो हमारी पवित्र संस्थाएं थीं। ये नष्ट हो गई हैं। इसके बाद आशा की किरण यह लगती है कि ये चीजें शायद बहुत दिन चल न पाएं। विचित्र स्थिति है कि जहां हम कहते हैं, हमें सजा दो, वहां कोई सजा देता ही नहीं। बाकी हमारे जो सेंट्रल सर्विसिज कंडक्ट रूल्ज हैं, उनमें एक बहुत बड़ा लूपहोल है कि आपको लिटरेरी, एस्थेटिक, साइंटिफिक लेखन के लिए इजाजत लेने की जरूरत नहीं पड़ती। यह उपन्यास तो खैर उतनी बड़ी चीज नहीं, मैंने कम्यूनल वॉयलेंस पर जो काम किया, वह बहुत विस्फोटक था। वह छप गया, अखबारों में भी आ गया और लोगों ने एक्सेप्ट कर लिया। माना जाता है कि व्यंग्य लिखना बहुत कठिन होता है और मैं स्वयं एक छोटामोटा व्यंग्यकार होने के नाते यह बात जानता हूं। इसमें भी उपन्यास जैसी लम्बी रचना में व्यंग्य का निर्वाह और भी कठिन होता है।

शब्द कुजी- बिजनेसमैन, पोलिटीशियन, ब्युरोक्रैट, न्यायपालिका, साइंटिफिक लेखन, विस्फोटक

विषय प्रवेश

विभूति नारायण राय जन्म 28 नवम्बर 1950, 1971 में अंग्रेजी साहित्य से एम. ए. करने और कुछ समय अध्यापन में बिताने के बाद 1975 में भारतीय पुलिस सेवा के सदस्य बने। पांच वर्षों तक (2008-2014) महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय वर्धा के कुलपति रहे। पुलिस महानिदेशक पद से अवकाश प्राप्त विभूति नारायण राय को सराहनीय सेवाओं के लिए इंडियन पुलिस मेडल और उत्कृष्ट सेवाओं के लिए राष्ट्रपति का पुलिस मेडल भी मिला।
लेखन कार्य

इनके अब तक छः उपन्यास घर, शहर में कर्फ्यू, किस्सा लोकतंत्र, तबादला, प्रेम की भूतकथा और रामगढ़ में हत्या प्रकाशित । शहर में कर्फ्यू का अंग्रेजी और भारत की लगभग सभी भाषाओं में तथा अन्य उपन्यासों का भी विभिन्न भाषाओं में अनुवाद हुआ है। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में नियमित लेखन। रणभूमि में भाषा तथा फेंस के उस पार किसे चाहिये सभ्य पुलिस, अंधी सुरंग में काश्मीर, पाकिस्तान में भगत सिंह नाम से लेखों के पाँच संग्रह प्रकाशित। यदा-कदा व्यंग्य लेखन भी। एक छात्र नेता का रोजनामचा शीर्षक से व्यंग्य लेखों का एक संकलन प्रकाशित। विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में कॉल लेखन ।

लेखक के अलावा एक एक्टिविस्ट के रूप में भारतीय राज्य और अल्पसंख्यकों के आपसी रिश्तों पर निरंतर अध्ययनरत और इसी सिलसिले में नेशनल पुलिस अकादमी, हैदराबाद द्वारा प्रदत्त एक वर्ष की फेलोशिप के तहत साम्प्रदायिक दंगों के दौरान पुलिस की छवि पर शोध, जिसके परिणामस्वरूप पुस्तक साम्प्रदायिक दंगे और भारतीय पुलिस आयी। मेरठ के साम्प्रदायिक दंगों (1987) के लोमहर्षक अनुभवों पर आधारित पुस्तक हाशिमपुरा 22 मई हाल ही में प्रकाशित। इस पुस्तक का भी अंग्रेजी, तमिल, उर्दू, कन्नड़ समेत कई भाषाओं में अनुवाद।

कथा यू के द्वारा उपन्यास तबादला पर इंदु शर्मा कथा सम्मान, उपन्यास किस्सा लोकतंत्र उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा सम्मानित, सफदर हाशमी सम्मान, राहुल सांकृत्यायन सम्मान, कमलेश्वर सम्मान उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा साहित्य भूषण सम्मान, राही मासूम

अमृत काल
अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ समीक्षित एवं स्वीकृत शोध पत्रिका
ISSN: 3048-5118, खंड3, अंक4, अक्तूबर - दिसंबर 2025

रजा सम्मान । लगभग दो दशकों तक हिन्दी की महत्वपूर्ण पत्रिका वर्तमान साहित्य का संपादन। बीसवीं शताब्दी के हिन्दी कथा साहित्य का लेखा-जोखा करती पुस्तक कथा साहित्य के सौ बरस का संपादन।
भारतीय नौकरशाही की बखिया उधेड़ता तेज तर्रार उपन्यास तबादला

बहुराष्ट्रीय निगमों की बढ़ती मौजूदगी और कॉरपोरेट दुनिया में कार्य-संस्कृति पर लगातार एक नैतिक मूल्य जोर दिए जाने के बावजूद भारतीय मध्यवर्ग की पहली पसन्द आज भी सरकारी नौकरी ही है, तो उसका सम्बन्ध, उस आनन्द से ही है जो गैर-जिम्मेदारी, काहिली, अकुंठ स्वार्थ और भ्रष्टाचार से मिलता हैय और हमारे स्वाधीन पचास सालों में सरकारी नौकरी इन सब गुणों का पर्याय बनकर उभरी है। इन्हीं के चलते तबादला-उद्योग वजूद दफ्तरों से लेकर राजनेताओं के बंगलों तक, शायद बाकी कई उद्योगों से ज्यादा, फल-फूल रहा है। इस उद्योग की जिन बारीक डिटेल्स को हम बिना इसके भीतर उतरे, बिना इसका हिस्सेदार बने, नहीं जान सकते, उन्हीं को यह उपन्यास इतने तीखे और मारक व्यंग्य के साथ हमारे सामने रखता है कि हमें उस हताशा को लेकर नए सिरे से चिन्ता होने लगती है जो भारतीय नौकरशाही ने पिछले पचास सालों में आम जनता को दी है। इस उपन्यास का वाचक व्यंग्य के उस ठंडे कोने में जा पहुँचा है जहाँ कोई उम्मीदबर नहीं आती। उपन्यास पढ़कर हम सचमुच यह सोचने पर बाध्य हो जाते हैं कि अगर यह हताशा वास्तव में हमारे इतने भीतर तक उतर चुकी है तो फिर रास्ता है किधर।

वास्तविकता कैसे हास्य का रूप ले लेती है। इसे व्यंग्यकारों से बेहतर कोई नहीं जान सकता है। 'तबादला' लेखक विभूतिनारायण राय का वह उपन्यास है जो पाठकों को गुदगुदाते हुए भारतीय नौकरशाही में जड़ जमा चुके भ्रष्टाचार को उजागर करता है। साहित्यिक तबका तबादला को श्रीलाल शुक्ल के राग दरबारी सरीखा बताता है लेकिन दोनों ही रचनाएं अपने-अपने समय और स्थान के मुताबिक भिन्न और प्रासंगिक हैं। उपन्यास सरकारी नौकरी में होने वाले तबादले पर केंद्रित है। कम शब्दों में कहें तो सरकारी नौकर किस तरह से अपने तबादले करवाने और रुकवाने की जुगत भिड़ाते हैं और कैसे यह एक उद्योग में तब्दील हो चुका है यह इसी बारे में है।

आम आदमी की नजर में आज भी सरकारी नौकरी की परिभाषा यही है कि आपको कुछ नहीं करना है। इसी परिभाषा के अनुरूप सरकारी कर्मी व्यवहार करते हैं और इसी तरह के लोग मिलकर सरकारी दफ्तर में कामचोरी. लापरवाही का माहौल बनाते हैं और भ्रष्टाचार का कोई मौका नहीं छोड़ते हैं। इसी परिवेश में ही तबादला उद्योग विकसित हुआ है। यहां एक सरकारी पद की अहमियत इस बात से तय होती है कि उस पर रहकर कितनी बड़ी राशि तक का भ्रष्टाचार किया जा सकता है। इसी चलते इस पद के लिए प्रतिस्पर्धा बनी रहती है। इसी प्रतिस्पर्धा का नतीजा है यह तबादले का धंधा। जिसमें ऊपर राजनेताओं से लेकर नीचे चपरासी तक सबकी जेबें गरम होती हैं। उपन्यास में कमलाकांत वर्मा और बटुकचंद उपाध्याय के बीच लोकनिर्माण विभाग के प्रांतीय खंड में अधिशासी अभियंता बनने की होड़ है। वो भी इसलिए कि कुंभ होने वाला है और यह मौका अपनी जेब भरने का सुनहरा अवसर लेकर आया है। उपन्यास में कमलाकांत जो शुरुआत में वांछित पद पर काबिज होता है, अपने गुट के सभी लोगों की मीटिंग बुलाता है। मीटिंग की वजह उसका आया तबादले का आदेश है। यहां लेखक ने ऑफिस की गुटबाजी, बाबू संस्कृति,चमचागिरी और पत्रकारिता के नाम पर हो रही दलाली पर जमकर तंज कसा है।

कमलाकांत अपने तबादले की खबर लगते ही लखनऊ रवाना हो जाते हैं। इस बीच बटुकचंद ऑफिस आकर अपना पदभार ग्रहण करते हैं। इस पद को पाने के लिए उन्होंने क्या तिकड़म भिड़ाई थी इसका जिक्र भी लेखक चुटकीले अंदाज में करते हैं। लेखक बताते हैं कि सरकारी महकमों में सत्ता परिवर्तन होता है तो कैसे माहौल बदल जाता है। लोगों की निष्ठा भी कुर्सी पर बैठे आदमी के साथ बदल जाती है। बटुकचंद को पता लगते देर नहीं लगती कि कमलाकांत लखनऊ पहुंचे हुए हैं। इस बीच वे भी लखनऊ की राह पकड़ते हैं।

सूबे की राजधानी तबादला उद्योग का मुख्य कार्यालय है। जहां एक ओर कमलाकांत अपने विभाग के मंत्री के पास पहुंच रिश्वत का मोलभाव कर मामला तय करते हैं और ट्रांसफर रुकवाते हैं तो वहीं बटुकचंद एक कार्यकर्तारूपी दलाल के जरिए मिनी मुख्यमंत्री भाभी जी, जिनकी पहुंच सीधे सीएम तक है, तक पहुंचते हैं। बटुकचंद भी भाभी जी से रिश्वत की रकम तय कर विदा हो जाते हैं। मंत्री-मुख्यमंत्रियों तक पहुंच बनाने में ये दोनों अफसर जो तिकड़म लगाते हैं वो भी लेखक ने दिलचस्प तरीके से बताई है और कमाल के किरदारों को गढ़ा है। संक्षेप में कहें तबादला पूरी शासन व्यवस्था में फैले भ्रष्टाचार का एक बयान है। जो पाठक को हंसाने के साथ साथ सोचने पर भी विवश कर देता है।
सुप्रसिद्ध कथाकार ममता कालिया के शब्दों में

हिन्दी कथाजगत में विभूति नारायण राय की उपस्थिति आश्चर्य की तरह बनी और विस्मय की तरह छा गयी। ....सबसे खास बात इस रचनाकार की यह है कि इनके सभी उपन्यास एक-दूसरे से बिल्कुल भिन्न हैं। घर में सम्बन्धों के विखण्डन की त्रासदी है तो श्शहर में कर्फ्यू में पुलिस आतंक के अविस्मरणीय दृश्यचित्र। किस्सा लोकतंत्र राजनीति में अपराध का घालमेल रेखांकित करता है। तबादला उपन्यास उत्तर आधुनिक रचना के स्तर पर खरा उतरता है क्योंकि इसमें कथातत्व का संरचनात्मक विखंडन और कथानक के तार्किक विकास का अतिक्रमण है। इक्कीसवीं सदी के पहले दशक में यह अपनी तरह का पहला कथा-प्रयोग रहा है। सरकारी तंत्र और

अमृत काल
अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ समीक्षित एवं स्वीकृत शोध पत्रिका
ISSN: 3048-5118, खंड3, अंक4, अक्तूबर - दिसंबर 2025

राजनीतिज्ञ की सांठगांठ के कारण तबादला एक स्वाभाविक प्रक्रिया न होकर उद्योग का दर्जा पा गया है। इन रचनाओं से अलग हटकर प्रेम की भूतकथा एक अद्भुत प्रेम कहानी है जिसमें प्रेमी अपनी जान पर खेलकर प्रेमिका के सम्मान की रक्षा करता है।

विभूति नारायण राय का मानना है कि हिन्दी में व्यंग्य को बहुत सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा गया और दो-एक लेखकों को छोड़कर बाकी को बहुत सीरियसली नहीं लिया गया। परसाई जी इसके एक उदाहरण हैं। शरद जोशी, रवीन्द्र त्यागी और श्रीलाल शुक्ल जैसे तीन-चार नाम और भी हैं, जिन्हें सम्मान के साथ याद किया जाता है। इनमें श्रीलाल शुक्ल पूरी तरह से व्यंग्य ही नहीं, और चीजें भी लिखते हैं। यह भी सही है कि दूसरी विधाओं के बहुत सारे कवि, बहुत सारे गद्यलेखक, जो उपन्यास लिख रहे हैं, कहानियां लिख रहे हैं, वे कहीं-न-कहीं व्यंग्य का इस्तेमाल करते हैं। इसलिए व्यंग्य को एक स्वतन्त्र विधा कहा जाए या नहीं, इसको लेकर खुद मेरे मन में ही शंकाएं हैं। हास्य या चुटकुले व्यंग्य नहीं होते । व्यंग्य में करूणा की एक धारासी अन्तर्निहित होती है कि आप हंसते-हंसते रोने लगते हैं या तिलमिला जाते हैं।

उनके व्यंग्य का इस्तेमाल गद्य में ही हो सकता है। गद्य में भी नाटक, रिपोर्ताज, संस्मरण आदि की तुलना में कथा साहित्य में उपन्यास में और कहानी में भी सबसे ज्यादा हो सकता है। कविता में शायद उतना नहीं हो सकता, हालांकि रघुवीर सहाय जैसे बड़े कवि उसका खूब इस्तेमाल करते हैं, जबकि अज्ञेय नहीं करते, क्योंकि इनमें अपने-अपने व्यक्तित्व का भी फर्क है।

व्यंग्य कुछ असल है, कुछ ख्वाब है, कुछ तर्जे बयां है। इसमें जो तर्जे बयां है, वह व्यंग्य को दूसरी विधाओं से अलग करता है, लेकिन जैसा कालिया जी ने याद दिलाया, इसमें लेखक की दृष्टि बहुत महत्वपूर्ण है। परसाई जी के पास यह दृष्टि है। काका हाथरसी और सुरेन्द्र चतुर्वेदी आदि की कविताओं, और हंसी तथा चुटकुलों को सुनकर आप थोड़ी देर के लिए हंस सकते हैं, लेकिन उनमें दृष्टि का अभाव है, कोई सपना या विजन नहीं है। ये हंसने-हंसाने, टाइम पास करने के लिए हैं, लेकिन व्यंग्य टाइम पास करने वाली
विधा नहीं है ।

विभूति नारायण राय का यह मानना है कि व्यंग्य केवल चोट पहुंचाने का माध्यम नहीं हो सकता। उसमें कहीं-न-कहीं सहानुभूति भी होती है। भारतीय समाज को लीजिए। उसमें लोग आम तौर पर लंगड़े, लूले, अंधे या कोढ़ी को देखकर हंसते हैं या उससे घृणा करते हैं । उसको पीछे से चपत लगाकर भाग जाते हैं। इसके विपरीत पश्चिमी समाज में जिसे कम्पैशन कहते हैं, उसका सही अर्थ मुझे यहां आकर ही समझ में आया। यहां ऐसे लोगों को पीछे से कोई चपत लगाकर नहीं भागता। हमारे समाज में कम्पैशन नाम की परम्परा नहीं है। मुझे लगता है कि व्यंग्य कम्पैशन की उसी परम्परा का एक हिस्सा है। आप जिसके ऊपर हंस रहे हैं, जिसको चोट पहुंचा रहे हैं, उसके लिए भी आपके मन में किसी तरह की घृणा नहीं है। आप स्थितियां ऐसी क्रियेट कर रहे हैं, जिसका मजा तो आप ले रहे हैं, पर कहीं न कहीं आपके मन में उस पात्र के लिए सहानूभूति है।

उनके अनुसार असल में हास्य और व्यंग्य के बीच बड़ी बारीक लाइन है, लेकिन यह बात सही है कि सिर्फ हास्य कोई बहुत गंभीर और सम्मानजनक रूप से स्वीकृत होने वाली विधा नहीं है। अंधे, लूले और लंगड़े का मजाक उड़ाना एक बहुत ही फूहड़, एक बहुत ही अमानवीय किस्म का मजा है, मनुष्य से नीचे की स्थिति है। व्यंग्य में कम्पैशन है। मेरे लिए इसका एक बड़ा उदाहरण गोर्की है। उसके चरित्र दलाल हैं, रंडियां हैं, डकैत हैं, भिखमंगे हैं, कोढ़ी हैं, लेकिन इनमें किसी चरित्र के प्रति उसके मन में घृणा नहीं है। उसे लगता है कि मनुष्य से नीचे की स्थितियों के लिए परिस्थितियां जिम्मेदार हैं और इसमें हमेशा एक गुंजाइश है कि यह व्यक्ति इससे बेहतर इनसान हो सकता है यानि गोर्की की दृष्टि सबसे महत्वपूर्ण है। आपने हास्य और व्यंग्य के बारे में जो पूछा, उनमें सबसे जरूरी एलिमेंट दृष्टि का है।

उनका कहना है कि बिना आदर्शवाद के साहित्य कैसे होगा? बिना आदर्शवाद के आप बड़ा साहित्य नहीं रच सकते। गौतम द क्या हिन्दी में व्यंग्य की सही समीक्षा हो रही है? उसको परखने या उसकी समालोचना करने के सही मानदंड मौजूद हैं या बन चुके हैं? वे मानता हैं कि आलोचना की दृष्टि से हिन्दी दरिद्र है। हमारे यहां तो कविता और कहानी की आलोचना के औजार भी नहीं हैं। बहुत सारी चीजें हमने पश्चिम से ली हैं। एक नामवर सिंह हैं, जो सब तरह का ठेका लेकर बैठे हैं। मैंने नाम लिया, लेकिन नाम लेने की जरूरत नहीं है, इस तरह के बहुत सारे लोग हैं। इस तरह के सारे हैंडिकैप्स व्यंग्य के साथ भी हैं।

विभूति नारायण राय के अनुसार मुख्य धारा के लेखकों में शायद एक शरद जोशी हैं, जिन्होंने कई वर्षों तक नियमित रूप से नवभारत टाइम्स में कॉलम लिखा, जिसे खूब पढ़ा गया। उनके कैसेट भी बिके। सो, ऐसा नहीं है कि लोग व्यंग्य को समझते नहीं हैं, लेकिन बात वही है। हिन्दी में अच्छी कविता कितनी पढ़ी जाती है? कविसम्मेलनों के चुटकुलेबाज या लतीफेबाज कवि ज्यादा सुने जाते हैं, लेकिन इससे वे मुख्य धारा के कवि तो नहीं हो जाते।

अमृत काल
अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ समीक्षित एवं स्वीकृत शोध पत्रिका
ISSN: 3048-5118, खंड3, अंक4, अक्तूबर - दिसंबर 2025

'तबादला' उपन्यास के बारे में विभूति नारायण राय जी का कहना है कि यह मेरा सबसे प्रिय उपन्यास घर है, जो मेरा पहला उपन्यास था। हालांकि शहर में कर्फ्यू ज्यादा चर्चित रहा और उसके कई भाषाओं में अनुवाद भी हो गए हैं। मुझे प्रिय घर है, वैसे यह कहना बड़ा मुश्किल है कि अपनी रचनाओं में किसे कौन सी जगह पर रखेंगे।

सारंश

तबादला में आपने भ्रष्ट नौकरशाही के माध्यम से पूरे प्रशासनतन्त्र को भ्रष्ट रूप में दिखाया है। क्या आप एक शहर के एक दफ्तर के और एक मेले के भ्रष्टाचार (माइक्रोकॉजम) को पूरी नौकरशाही के भ्रष्टाचार (मैक्रोकॉज्म) का प्रतीक कह जा सकते हैं। व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखें तो स्वतन्त्र भारत में जिस तरह से भ्रष्टाचार में निरन्तर और अटूट क्रम से वृद्धि हो रही है, इसके लिए कौन जिम्मेदार है कानून, राजनीति, सरकार, समाज या कोई और या ये सभी मिलकर जिम्मेदार हैं? आप एक बहुत भ्रष्ट कही जाने वाली सरकारी व्यवस्था यानि पुलिस के अनेक अधिकारी हैं, जिसका तबादला सजा के रूप् में देना जरूरी है। पर ऐसा होता नहीं है तबादला जैसा उपन्यास लिखने ये व्यवस्था ही प्रेरक रहे है।

संदर्भ सूची

[1]. विभूति नारायण रायः 'तबादला' राधाकृष्ण प्रकाशन प्र0 लि0, नई दिल्ली
[2]. उर्वशी शर्माःहिन्दी उपन्यास और कहानी एक विश्लेषण , मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर
[3]. खगेन्द्र ठाकुरःएक सजग रचनात्मक लेख पृष्ट 10
[4]. धीरेन्द्र वर्माः हिन्दी साहित्य कोश
[5]. शिवरामः अभिव्यक्ति 8पृ0 59
[6]. रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास